इकाई 5: लोकमानस की अभिव्यक्त(प्रकीर्ण साहित्य के विशेष सन्दर्भ में)

इकाई की रूपरेखा:

5.1 उद्देश्य
5.2 प्रस्तावना
5.3 प्रकीर्ण साहित्य : अर्थ एवं स्वरूप
5.4 लोकोक्ति
5.5 मुहावरे
5.6 पहेलियाँ और पालने के गीत
5.7 सारांश
5.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
5.9 अधिक जानने के लिए पढ़े
5.10 अभ्यास-प्रश्न

5.1 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन से अध्येता—

- प्रकीर्ण साहित्य के अर्थ एवं अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- प्रकीर्ण साहित्य के विविध भेदों से अवगत होंगे।
- प्रकीर्ण साहित्य में निहित लोक संस्कृति को जानेंगे।
- लोकोक्ति और जनमानस के अंतःसंबंध समझने में सफल होंगे।
- लोकोक्ति और मुहावरे के बीच सूक्ष्म अंतर को समझेंगे।
- पहेलियाँ और पालने के गीत के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे।

5.2 प्रस्तावना:

लोक साहित्य मानव जीवन की उस रचनात्मक परंपरा का प्रतीक है, जो पीढ़ियों से जनमानस के अनुभव, भावना, आस्था और बुद्धि के रूप में प्रवाहित होती आई है। यह साहित्य किसी एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि पूरे समाज की सामूहिक चेतना की उपज है। लोक साहित्य की अनेक विधाएँ हैं—जैसे लोकगीत, लोककथा, लोकगाथा, लोकनाट्य, लोककला इत्यादि। इन प्रमुख विधाओं के अतिरिक्त ऐसी भी अनेक लघु विधाएँ हैं, जो

सीधे जनता के दैनिक जीवन से जुड़ी हुई हैं और लोक की तत्काल प्रतिक्रिया या बुद्धिप्रदर्शक कथन के रूप में सामने आती हैं। इन्हीं लघु और बिखरी हुई रचनात्मक विधाओं को सामूहिक रूप से लोक के 'प्रकीर्ण साहित्य'के अंतर्गत रखा जाता है।

5.3 प्रकीर्ण साहित्य :अर्थ एवं स्वरूप:

'प्रकीर्ण' शब्द का कोशगत अर्थ है—बिखरा हुआ, मिला-जुला या मिश्रित। ये अर्थ अपने आप में इस साहित्य की प्रकृति को स्पष्ट करते हैं, क्योंकि लोकजीवन में यह साहित्य किसी एक निश्चित रूप में नहीं, बल्कि विविध और बिखरे रूपों में मिलता है। वस्तुतः लोकसाहित्य की लगभग सभी विधाएँ किसी-न-किसी अंचल में बिखरी हुई हैं। उदाहरण के लिए, लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा अथवा लोकनाट्य—सभी किसी विशेष क्षेत्र में उत्पन्न होकर समय के साथ अन्य क्षेत्रों में पहुँचते-पहुँचते रूपांतरित होते चले जाते हैं। इस प्रकार, एक अंचल में रचित रचना जब दूसरे अंचल में प्रवेश करती है, तो उसमें नए-पुराने विचारों, भाषाई भेदों और सांस्कृतिक तत्वों का सम्मिश्रण हो जाता है। यही कारण है कि लोक साहित्य में किसी रचना का एक ही रूप नहीं मिलता, बल्कि उसके कई संस्करण या रूपांतर देखने को मिलते हैं।

मौखिक परंपरा पर आधारित होने के कारण लोक साहित्य का स्थायी रूप सुरक्षित नहीं रह पाता। जब कोई रचना एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक केवल वाणी के माध्यम से पहुँचती है, तो उसमें स्वाभाविक रूप से परिवर्तन होते रहते हैं। इसलिए लोक साहित्य के अध्ययन और संरक्षण के लिए विद्वानों को अनेक बिखरे हुए रूपों में से 'मानक पाठ' तैयार करने की आवश्यकता पड़ती है। आज लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा और लोकनाट्य जैसी विधाओं का काफी बड़ा हिस्सा संकलित किया जा चुका है, जिससे इनका स्वरूप अपेक्षाकृत निश्चित हो गया है। लेकिन लोकजीवन में ऐसी भी अनेक विधाएँ हैं, जो अभी तक पूरी तरह संकलित या मानकीकृत नहीं हो पाई हैं। मनुष्य के दैनिक व्यवहार, अनुभव, हास्य-विनोद और बुद्धिपरक दृष्टि से उत्पन्न उक्तियाँ, कहावतें, मुहावरे, सूक्तियाँ, चुटकुले, पहेलियाँ और मंत्र जैसी रचनाएँ आज भी जनमानस में जीवित हैं। ये लोकजीवन की सहज अभिव्यक्तियाँ हैं जो किसी अवसर, परिस्थिति या व्यवहार के अनुरूप स्वतः प्रयोग में आती हैं परंतु इनका कोई स्थायी रूप नहीं होने के कारण इनमें अनेक रूपांतर पाए जाते हैं। यही कारण है कि ये रचनाएँ अभी तक पूर्ण रूप से मानकीकृत नहीं हो सकी हैं।

इन्हीं अस्त-व्यस्त, बिखरी और विविध रूपों में उपलब्ध रचनाओं को 'फुटकर' अथवा 'प्रकीर्ण लोक साहित्य' कहा जाता है। ये रचनाएँ छोटी होते हुए भी लोक-संस्कृति की गहराई को प्रकट करती हैं।लोकोक्तियाँ लोक के अनुभव से उपजी हुई संक्षिप्त शिक्षाएँ हैं; मुहावरे लोकजीवन की व्यावहारिक बुद्धि का परिचायक हैं; पहेलियाँ लोक की कल्पनाशीलता और तर्कशीलता को दर्शाती हैं; वहीं चुटकुले और सूक्तियाँ लोक के

हास्यबोध और व्यावहारिक चतुराई के प्रतीक हैं। इन सबका सम्मिलन लोक जीवन की उस सूक्ष्म संवेदना को अभिव्यक्त करता है जो बड़े ग्रंथों या विस्तृत कथाओं में भी नहीं मिलती।

इस प्रकार, प्रकीर्ण लोक साहित्य भले ही आकार में छोटा और रूप में असंगठित हो, पर यह लोक-संस्कृति की जीवंतता, सृजनशीलता और अनुभवजन्य बुद्धि का साक्षात् प्रतीक है। इसमें लोक की वाणी, उसकी आस्था, उसकी हास्य प्रवृत्ति और जीवनदर्शन सब कुछ समाहित है। इसलिए इसे लोक साहित्य की "लघु परंतु सारगर्भित विधा" कहा जा सकता है,जो न केवल लोक के जीवन को प्रतिबिंबित करती है, बल्कि उसकी भाषा, विचारधारा और सांस्कृतिक निरंतरता को भी सहेजे हुए हैं।

5.4 लोकोक्ति:

लोकसाहित्य की विविध धाराओं में लोकोक्ति एक अत्यंत प्रभावशाली और प्राचीन विधा है। यदि इसकी व्युत्पत्ति पर दृष्टि डालें, तो 'लोक की उक्ति' कहा जा सकता है, परंतु व्यवहार में यह अर्थ सीमित होकर 'कहावत' के रूप में रूढ़ हो गया है। वस्तुतः लोक द्वारा कही जाने वाली प्रत्येक वाणी—चाहे वह लोकगीत हो, लोकगाथा या लोकनाट्य—'लोक की उक्ति' कही जा सकती है, किंतु प्रकीर्ण साहित्य के अंतर्गत 'लोकोक्ति' शब्द का प्रयोग विशेष रूप से 'कहावत' के अर्थ में किया जाता है। इस व्यापक शब्द के अंतर्गत पहेलियाँ, मुहावरे आदि रूप भी समाहित किए जा सकते हैं, पर यहाँ उसका आशय कहावतों से ही लिया गया है।

लोकोक्तियाँ लोकमानस के अनुभव और बुद्धि की अनुपम निधि हैं। संसार की लगभग सभी भाषाओं में ये किसी न किसी रूप में मिलती हैं और जन-साधारण के व्यावहारिक ज्ञान तथा निरीक्षण का दर्पण होती हैं। ये मानव-स्वभाव की गहराइयों और उसके जीवनानुभवों का सार प्रस्तुत करती हैं। व्यक्ति के दैनिक जीवन में आने वाली जटिलताओं को सुलझाने के लिए ये सरल मार्गदर्शक का कार्य करती हैं। किसी भी देश की जनता की संस्कृति, मानसिकता और जीवन-दृष्टि को जानने का सरल उपाय उसकी लोकोक्तियाँ हैं। इनसे प्रेरणा और ज्ञान ग्रहण किया जा सकता है।संस्कृत में लोकोक्ति के समानार्थी कई शब्द मिलते हैं—जैसे पवाद, आभाणक, लोकप्रवाद, लौकिकी गाथा आदि। इन सबमें लोकजीवन की विविध विशेषताओं का संकेत निहित है। विदेशी भाषाओं में भी इसके पृथक नाम प्राप्त होते हैं। लैटिन, ग्रीक, स्पेनिश, तुर्की, रूसी, अरबी, हिब्रू तथा अंग्रेज़ी में इनके लिए अलग-अलग शब्द प्रचलित हैं। भारतीय भाषाओं में हिंदी में 'लोकोक्ति' या 'कहावत', उर्दू में 'ज़बुल-मिस्ल', लंहदा में 'अखाण', राजस्थानी में 'ओखाणो', गढ़वाली में 'पखाणा', बंगला में 'प्रवाद', मराठी में 'आणा' तथा तेलुगु में 'समीटा' जैसे नाम प्रचलित हैं।

5.4.1 प्राचीन परंपरा:

भारतीय सभ्यता जितनी प्राचीन है, लोकोक्तियों की परंपरा भी उतनी ही प्राचीन है। वेदों और उपनिषदों में ऐसे अनेक वाक्य मिलते हैं, जो हमारे समाज की पुरातन ज्ञान-परंपरा को उजागर करते हैं। संस्कृत के कवि—कालिदास, भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि—ने अपनी रचनाओं में लोकोक्तियों का प्रचुर प्रयोग किया है, जिससे भाषा का प्रभाव कई गुना बढ़ गया है। प्राकृत और पाली ग्रंथों, पंचतंत्र और हितोपदेश जैसी कृतियों में भी नीति और अनुभवजन्य विचारों की अभिव्यक्ति लोकोक्तियों के माध्यम से हुई है।लोकोक्तियाँ समाज के रीति-रिवाज, नैतिकता, धार्मिक विचारों और जीवन-मूल्यों का पूरा चित्र प्रस्तुत करती हैं। ये हर काल और हर समाज के लिए उपयोगी होती हैं और नीतिशास्त्र के सूत्रों की तरह लोकजीवन का मार्गदर्शन करती हैं। यही कारण है कि इन्हें समाज की 'अक्षय निधि' कहा गया है।

5.4.2 लोकोक्ति का उद्भव एवं विकास:

लोकोक्ति का जन्म लोकजीवन की घटनाओं और अनुभवों से होता है। कोई व्यक्ति किसी विशेष परिस्थिति को देखकर जो बात कहता है, वह यदि जनसामान्य के अनुभव से मेल खाती है, तो वही वाक्य धीरे-धीरे लोक की संपत्ति बन जाता है। डॉ. कन्हैयालाल सहल के अनुसार, "जिस घड़े में पानी पूरा नहीं होता, वही छलकता है,इस साधारण दृश्य ने किसी सूक्ष्मदर्शी व्यक्ति के मन में यह विचार जगाया—जो व्यक्ति अधूरी विद्या वाला होता है, वही अधिक बोलता है। इस प्रकार उस अनुभव से निकला वाक्य "अधजल गगरी छलकत जाए" एक कहावत बन गया।

इसी प्रकार शिकारी के उदाहरण में कहा गया है कि "हाथ का एक पक्षी झाड़ी के दो पक्षियों के बराबर है।" यह अनुभव से उपजा विचार ही लोकोक्ति बन गया, जो आगे चलकर हर परिस्थिति में लागू होने लगा, जब व्यक्ति वर्तमान लाभ छोड़कर अनिश्चित लाभ की ओर बढ़ता है। लोकोक्तियों की यह विशेषता है कि वे शाब्दिक अर्थ में नहीं, बल्कि संकेतात्मक या प्रतीकात्मक अर्थ में प्रयुक्त होती हैं। इनके पीछे कोई न कोई जीवन-घटना, अनुभव या शिक्षाप्रद प्रसंग अवश्य रहता है। गढ़वाली और राजस्थानी में इन्हें 'अखाणो' या 'ओखाणा' कहा जाता है, जो इस तथ्य को दर्शाता है कि इनके भीतर किसी घटना की संक्षिप्त झलक समाई होती है। जैसे ब्रज की लोकोक्ति—"परदेसी की प्रीति, झोल को तापनो"—यह कहावत जीवन की दो घटनाओं पर आधारित है और अनुभव से उपजे सिद्ध वाक्य का रूप धारण कर चुकी है।

कुछ लोकोक्तियाँ ऐतिहासिक घटनाओं या व्यक्तियों के कथनों से भी उत्पन्न हुई हैं, जैसे शिवाजी का तानाजी की मृत्यु पर कथन—"गढ़ आला, पण सिंह गेला"—समय के साथ एक प्रसिद्ध लोकोक्ति बन गया। भारतीय समाज की आस्थाएँ, जैसे भाग्यवाद या कर्मवाद, भी लोकोक्तियों के निर्माण में सहायक रही हैं। उदाहरण के लिए—"विधि अंकूर

मिटे न मिटाए" या "जे कबऊ न जाति के साथी"—जैसी कहावतें समाज की धार्मिक और जातिगत संरचना को प्रकट करती हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि लोकोक्तियाँ लोकजीवन का सार हैं—वे अज्ञात लोककवियों, अनुभवियों, ज्ञानियों की वाणी से उपजीं, अनुभव से पकीं, और पीढ़ियों से समाज का मार्गदर्शन करती आ रही हैं। लोकसाहित्य के इस अमूल्य अंग ने न केवल भाषा को समृद्ध किया है, बल्कि जीवन को भी दिशा दी है।

लोकोक्ति पर विचार करते समय सभी विद्वानों ने इसकी परिभाषा निर्धारित की है। इन सभी परिभाषाओं में, चाहे वे भारतीय विद्वानों की हों अथवा पाश्चात्य विद्वानों की, अधिक मतभेद नहीं है।

5.4.3 लोकोक्ति की कुछ परिभाषाएँ -

डॉ. श्याम परमार ने बोरकाटे के द्वारा लोकोक्ति की दी गई परिभाषा को इस प्रकार प्रस्तुत किया है- जनता की अपनी भाषा में किसी सर्वमान्य सत्य को थोड़े से शब्दों में प्रकट करने वाला लोक प्रचलित कथन ही लोकोक्ति है।

रवींद्र भ्रमर के अनुसार-लोकोक्ति लोक में प्रचलित वह वाक्य, कथन या लघु वार्ता ही ठहरती है, जिसे लोक मानस के अंतराल से प्रस्फुटित जान की कोई किरण माना जा सकता है।

बेकन के अनुसार-भाषा के वे तीव्र प्रयोग, जो व्यापार और व्यवहार की गुत्थियों को काटकर तह तक पहुँच जाते हैं, लोकोक्ति कहलाते हैं।

डॉ. जॉनसन के अनुसार-वे संक्षिप्त वाक्य जिनको लोग प्रायः दोहराया करते हैं, लोकोक्ति कहलाते हैं।

टी. शिप्ले के अनुसार-लोकोक्ति किसी विशेष समूह में प्रचलित कोई ऐसा वाक्य है जो लोकानुभव पर आधारित जीवन की एक सारभूत समीक्षा है।

ऐग्रीकोला के अनुसार-कहावतें वे संक्षिप्त वाक्य हैं जिनमें आदिपुरुषों ने सूत्रों की तरह अपनी अनुभूतियों को भर दिया है।

सर्वन्टीज के अनुसार-कहावतें वे छोटे वाक्य हैं जिनमें लंबे अनुभव का सार हो।

उपरोक्त विविध परिभाषाओं को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि लोकोक्ति वही हो सकती है, जिसमें व्यापक अर्थव्याप्ति हो। लोकोक्ति वह उक्ति है, जिसमें कोई गंभीर आशय छिपा हो। लोकोक्तियों का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है और उसका संगठन कम से कम अर्थवान शब्दों में होता है।

लोकोक्तियों और कहावतों की सामान्य विशेषताओं पर विचार करते समय अनेक विद्वानों ने उनके स्वरूप, शैली और प्रभाव के विविध पहलुओं को स्पष्ट किया है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने इनकी समासात्मक रचना, अनुभूति एवं निरीक्षण की गहराई तथा भाषा की सहजता को प्रमुख गुण माना है। इन विशेषताओं के आधार पर ही लोकोक्तियों

के लक्षणों को समझा जा सकता है। लोकोक्ति की विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं-

1. संक्षिप्तता में प्रभावशीलता:

लोकोक्तियाँ अल्प शब्दों में गहन अर्थ प्रकट करती हैं। इसीलिए डॉ. सत्येंद्र ने इन्हें "गागर में सागर" भरने जैसा कहा है। उदाहरण-ऊँट के मुँह में जीरा, अंधों में काना राजा, चोर की दाढ़ी में तिनका।

2. लयात्मकता और गति:

लोकोक्तियों में स्वाभाविक लय और ताल होती है। अनेक कहावतें गेय रूप में कही जाती हैं, जिससे उनमें काव्यात्मकता आ जाती है। उदाहरण स्वरूप ब्रज की लोकोक्तियाँ—

आलस नींद किसान्यै खोबै, चोरयै खोबै खाँसी।
टका ब्याज वैरागीयै खोबै, रौड़यै खोबै हाँसी ।।
उत्तम खेती मध्यम बान, अधम चाकरी भीख निदान।

3. तुकांत और अनुप्रास की सुन्दरता:

लोकोक्तियों में ध्वन्यात्मक सौंदर्य भी मिलता है। तुक और अनुप्रास के कारण वे अधिक आकर्षक बनती हैं। जैसे— 'साँच को आँच नहीं'या 'एक बार जोगी, द्वै बार भोगी, तीन बार रोगी।'

4. अनुभव और निरीक्षण की गहराई:

लोकोक्तियाँ लोकजीवन की गहन अनुभूतियों और सूक्ष्म निरीक्षणों से उत्पन्न होती हैं। उदाहरण-'साँझ कौ आयौ पाहुनी, औरू सबेरे कौ मेंहु।'

5. प्रभावशीलता और लोक-रंजकता:

अधिकांश लोकोक्तियाँ न केवल ज्ञानवर्धक होती हैं, बल्कि मनोरंजक भी होती हैं। उदाहरण—'अंधी पीसे कुत्ता खाए', 'चिराय के नीचे अंधेरों', 'धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का।'

6. सरल और सहज भाषा:

लोकोक्तियों की भाषा इतनी सीधी होती है कि आम जन भी तुरंत उसका अर्थ समझ लेता है। उदाहरण-'सौकीन डुकरिया चटाई को लहंगा', 'अरहर की टटिया गुजराती तारौ।'

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय द्वारा उल्लिखित समासात्मकता, अनुभूति-निर्भरता और सरलता, डॉ. दक्षिणामूर्ति की बताई गई इन विशेषताओं में स्वाभाविक रूप से समाहित हो जाती हैं। इस प्रकार लोकोक्तियों का रूप न केवल लघु और सारगर्भित होता है, बल्कि उनमें लोकजीवन की सजीवता, अनुभव की गहराई और भाषा की मधुरता भी समाहित होती है।

लोकोक्तियाँ मानव जीवन के विभिन्न पक्षों से जुड़ी होती हैं। इनका प्रयोग प्रायः किसी को सीख देने, सावधान करने या किसी विचार की पुष्टि करने के उद्देश्य से किया जाता है। कई बार इनका प्रयोग व्यंग्य, परिहास या कटाक्ष प्रकट करने के लिए भी होता है। इस प्रकार, उनके प्रयोजन, विषय-वस्तु, रूप और जीवन के विभिन्न पहलुओं के आधार पर लोकोक्तियों का विभाजन किया जा सकता है। लोकोक्तियों के वर्गीकरण पर विचार करने वाले विद्वानों में सर्वप्रथम डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने लोकोक्तियों को पाँच प्रमुख वर्गों में विभाजित किया है—1. स्थान-संबंधी लोकोक्तियाँ, 2. जाति-संबंधी लोकोक्तियाँ, 3. प्रकृति एवं कृषि-संबंधी लोकोक्तियाँ, 4. पशु-पक्षी-संबंधी लोकोक्तियाँ, 5. प्रकीर्ण (विविध) लोकोक्तियाँ।

5.5 मुहावरे:

दैनिक जीवन में भाषा को रोचक, सजीव और प्रभावशाली बनाने में मुहावरों का विशेष योगदान है। इनके प्रयोग से भाषा में लाक्षणिकता तो आती ही है, साथ ही अनावश्यक विस्तार भी समाप्त हो जाता है। ये किसी भाषा में प्रचलित ऐसे वाक्यांश होते हैं, जो वाक्य में प्रयुक्त होने पर ही अपना पूर्ण अर्थ प्रदान करते हैं। स्वतंत्र रूप से इनका अर्थ स्पष्ट नहीं होता और न ही इनके शब्दों में परिवर्तन स्वीकार्य होता है। उदाहरण स्वरूप 'पानी-पानी होना'एक प्रचलित मुहावरा है; यदि इसकी जगह 'जल-जल होना' कह दिया जाए तो कोई अर्थ नहीं बनता।

मनुष्य ने अपने जीवन के अनुभवों, व्यवहारों और भाव-विश्व की सूक्ष्म अनुभूतियों को अनेक प्रतीकों में व्यक्त किया है। इन्हीं प्रतीकात्मक प्रयोगों से मुहावरों का जन्म माना जाता है। भाषा-विदों के अनुसार मानव की 'लाघवप्रियता'—अर्थात् कम से कम शब्दों में अधिक अर्थ व्यक्त करने की प्रवृत्ति—ही मुहावरों की उत्पत्ति का मूल कारण है। व्यक्ति साधारण बात को साधारण ढंग से कहने के स्थान पर उसे परोक्ष या व्यंजक तरीके से व्यक्त करता है। यही कारण है कि भाषा का यह रूप संक्षिप्त, प्रभावपूर्ण और गद्यात्मक माना जाता है। संस्कृत ग्रंथों में मुहावरों सूक्तियाँ या लोकोक्तय: के नाम से बहुतायत प्रयोग देखने को मिलता है। भाषा में मुहावरों का प्रयोग अर्थ वैशिष्ट्य, हास्य-व्यंग्य, चमत्कार, संक्षिप्तता, भावों की स्पष्टता तथा अभिव्यक्ति की सरलता के लिए किया जाता है। इनके प्रयोग से भाषा की शैली रोचक बनती है और संप्रेषण में आत्मीयता आती है। 'मुहावरा' शब्द अरबी भाषा से ग्रहण किया गया है। यद्यपि इसके पर्याय रूप में हिंदी में 'रूढ़ि-प्रयुक्ति','वाग्धारा' आदि शब्द भी प्रयुक्त होते हैं, फिर भी व्यवहार में 'मुहावरा' ही अधिक प्रचलित है।

हिंदी शब्द-सागर के अनुसार-मुहावरा उस वाक्य या प्रयोग को कहा गया है, जिसका अर्थ लक्षणा या व्यंजना द्वारा सिद्ध हो तथा जो अपने अभिधात्मक अर्थ से भिन्न और विशिष्ट अर्थ व्यक्त करता हो। लाला भगवानदीन ने भी रूढ़ लक्षणा को ही

मुहावरा माना है। डॉ. कृष्णलाल हंस के अनुसार—मुहावरे वास्तव में वाक्य-खंड होते हैं, जिनके प्रयोग से वाक्य की शक्ति और प्रभाव अनेक गुना बढ़ जाता है। इसमें प्रयुक्त शब्द अत्यंत सार्थक और संतुलित होते हैं। उन्होंने मुहावरों की कुछ प्रमुख विशेषताएँ भी निर्दिष्ट की हैं—

1. बोलचाल में प्राप्त रूप साहित्य में भी अक्षुण्ण रहता है।
2. मुहावरे का अर्थ वाक्य-प्रयोग के बिना स्पष्ट नहीं होता।
3. मुहावरा साधारण शब्दार्थ नहीं, बल्कि विशेष और व्यंजित अर्थ देता है।
4. इसका प्रयोग प्रसंगानुसार किया जाता है और अर्थ भी प्रसंगोचित ही होता है।

5.5.1 मुहावरा और लोकोक्ति में अंतर:

यद्यपि मुहावरा और लोकोक्ति दोनों संक्षिप्त अभिव्यक्तियाँ हैं, फिर भी इन दोनों के स्वभाव में महत्वपूर्ण अंतर है। डॉ. शंकरलाल यादव के अनुसार—लोकोक्ति किसी सत्य या अनुभूति का पूर्ण वाक्य रूप में कथन है; वह स्वतंत्र वाक्य होती है। इसके विपरीत मुहावरा स्वतंत्र न होकर किसी बड़े वाक्य के भीतर प्रयुक्त होता है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने बताया है कि मुहावरे गद्यात्मक होते हैं जबकि लोकोक्तियाँ गद्य तथा पद्य दोनों में मिलती हैं। दोनों लघु रूप में होते हुए भी मुहावरा और भी अधिक संक्षिप्त माना जाता है। डॉ. दक्षिणामूर्ति के अनुसार—

1. लोकोक्तियाँ प्रायः अन्योक्ति या अप्रस्तुत व्यंजना का रूप धारण करती हैं, जबकि मुहावरे लाक्षणिक अर्थ व्यक्त करते हैं।
2. बहुत-से मुहावरों के अंत में 'ना' प्रत्यय मिलता है, जैसे—'गुस्सा पीना', 'सिर पर चढ़ना' आदि; यह लक्षण लोकोक्तियों में नहीं मिलता।
3. कहावतें अनुभवजन्य सत्य पर आधारित होकर विविध भाषाओं में समान रूप से मिल जाती हैं, जबकि मुहावरों का शाब्दिक अनुवाद दूसरी भाषा में अर्थहीन हो जाता है।
4. मुहावरों में कार्य-व्यवहार का संकेत होता है, जबकि लोकोक्तियों में नैतिक या अनुभव-प्रधान कथन निहित रहता है।
5. अलंकार-शास्त्र में कहावतों का स्थान है, जबकि मुहावरे शब्द-शक्तियों के अंतर्गत आते हैं।

5.5.2 मुहावरों के प्रकार:

मुहावरे किसी घटना, क्रिया या विशेष अनुभव के आधार पर जन्म लेते हैं, इसलिए इनके कई प्रकार माने गए हैं—

1. संस्कारों तथा परंपराओं से संबंधित मुहावरे
2. ऐतिहासिक घटनाओं को व्यक्त करने वाले

3. पौराणिक प्रसंगों पर आधारित
4. जातिगत जीवन और व्यवहार से जुड़े
5. शकुन–अपशकुन तथा लोक-विश्वासों से संबंधित मुहावरे

अपनी प्रगति जाँचे:

1. हिंदी शब्द-सागर में 'मुहावरा' का अर्थ किस प्रकार दिया है?
2. 'लोकोक्ति' से आप क्या समझते हैं?
3. टी. शिप्ले ने लोकोक्ति को किस प्रकार परिभाषित किया है?
4. 'प्रकीर्ण' शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
5. लोकोक्ति को उर्दू में क्या कहते है?

5.5.3 लोकोक्ति और मुहावरे में अभिव्यक्त लोक संस्कृति:

लोकोक्तियाँ और मुहावरे लोक–संस्कृति तथा जन–अनुभूतियों को अपने भीतर समेटे हुए होते हैं। समाज के रीति–रिवाज, आस्था–विश्वास, पुराणों की अवधारणाएँ, भाग्यवाद, जातीय ढाँचा, आर्थिक दशा, नीति–मर्यादा, भोजन–पान, धार्मिक प्रथाएँ तथा शकुन–अपशकुन जैसे अनेक पहलुओं का स्पष्ट प्रतिबिंब इन अभिव्यक्तियों में दिखता है। इनकी परिधि अत्यंत विस्तृत है, जिसे किसी सीमा में बाँधा नहीं जा सकता। लोक–अभिव्यक्ति में लोक संस्कृति के प्रमुख आयामों का निम्न रूप से निरूपण मिलता है—

1. संस्कार–परंपराओं का प्रभाव:

मुहावरों और लोकोक्तियों में जीवन के विविध संस्कारों एवं अनुष्ठानों का व्यापक उल्लेख मिलता है। जन्म से मृत्यु तक के संस्कारों ने कई मुहावरों को जन्म दिया है। जैसे—चूड़ी बहोरना, बाँह छोड़ना, सुहाग उतरना, हल्दी का दाग न छूटना, भाँवर डालना, दाँतों की मिस्सी न छूटना, माँग बघेरना, लकड़ी देना, क्रिया–कर्म करना आदि। ये सभी अभिव्यक्तियाँ जीवन–चक्र से जुड़े संस्कार–कर्मों को रेखांकित करती हैं।

2. ऐतिहासिक संदर्भों का दर्शन:

कई मुहावरे भारतीय इतिहास की घटनाओं की स्मृति लिए हुए हैं। 'अनाड़ी होना', 'जौहर करना', 'ताज ऊँचा करना', 'बीड़ा उठाना' आदि इसी श्रेणी में आते हैं। 'अनाड़ी' शब्द आर्यों द्वारा अन्य जातियों को कम बुद्धिमान मानने की प्रवृत्ति का सूचक है।'जौहर करना' मध्यकाल में प्रचलित उस रीति की ओर इंगित करता है, जिसमें स्त्रियाँ अपनी लाज–रक्षा हेतु अग्नि–प्रवेश कर देती थीं। 'ताज ऊँचा करना' राजा की प्रतिष्ठा बढ़ाने का द्योतक है। इसी प्रकार 'जयचंद होना' या 'विभीषण होना' जैसे मुहावरे छल–कपट या देशद्रोह के व्यवहार को दर्शाते हैं।

3. पौराणिक धारणाओं का प्रतिबिंब:

भारतीय समाज में पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक, मोक्ष आदि की भावनाएँ अत्यंत प्रभावी रही हैं, इसलिए उनसे जुड़े अनेक मुहावरे प्रचलन में हैं। जैसे—पाप धोना, माया रचना, मुल्क–ए–अदम भेजना, हंस रवाना होना, ईश्वर की पूजा होना आदि। 'लिखने वाला लिख गया, मिटन हारा कौन' और 'होनी अमिट ऋषि–मुनि गाई' जैसी लोकोक्तियाँ भी पौराणिक मान्यताओं को अभिव्यक्त करती हैं। दुष्कर्मों के बाद अच्छाई दिखाने पर 'पाप धोना' कहा जाता है, छलपूर्ण कार्य के लिए 'माया रचना'—जैसा कि मारीच ने रामायण में किया था। मृत्यु को 'मुल्क–ए–अदम पहुँचना' कहा जाता है। भाग्यवाद से जुड़े कथन भी इन्हीं विश्वासों से प्रेरित हैं।

4. नैतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति:

नीति–प्रधान लोकोक्तियों में लोक–समाज की नैतिकता झलकती है। जैसे—'बिगरी में भाई टूटि जाति असनाई', 'बिन भैया शोभा नांइ', 'भाई–बंधी में एक सरम सब होती' आदि। विपत्ति आने पर संबंधों के टूटने, किसी समारोह में भाइयों के अभाव से उसकी शोभा घटने तथा भाईचारे में एक दूसरे के सम्मान की रक्षा करने की लोक–नीति इन कथनों में प्रकट होती है।

5. जातिगत संरचना का चित्रण:

कई मुहावरे समाज में प्रचलित जातिगत धारणाओं की ओर संकेत करते हैं। 'छत्तीसा' नाई जाति की चतुराई का द्योतक है, 'कोरिया' मुहावरा कोलियों के सरल और भोले स्वभाव को दर्शाता है। 'गधा', 'बैल', 'चमरा', 'बछिया के ताऊ' जैसे ब्रजभाषा के प्रयोग मूर्खता, आलस्य अथवा गँवारपन के लिए प्रयुक्त होते रहे हैं।

6. अंधविश्वास और शकुन–अपशकुन का असर:

लोक–जीवन में प्रचलित अंधविश्वासों तथा शुभ–अशुभ संकेतों का प्रतिबिंब भी मुहावरों में मिलता है। बच्चे के बीमार पड़ने पर 'नज़र लगना' कहा जाता है और निवारण हेतु टोटके किए जाते हैं। एड़ी खुजाना, काग मँड़राना, हत्था चिल्लाना, नमक खाना, गंगा नहाना आदि मुहावरे इसी प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। 'काग मँड़राना' या 'हत्था चिल्लाना' किसी अनिष्ट की आशंका को व्यक्त करते हैं। नमक खाने को वफादारी का प्रतीक माना जाता है, और असंभव कार्य के सफल होने को 'गंगा नहाने' जैसा पुण्य परिणाम समझा जाता है।

7. आर्थिक दशा का चित्रण:

अनेक लोकोक्तियाँ जन–समुदाय की आर्थिक स्थिति को उजागर करती हैं। 'घर में नहीं दाने, बीबी चली भुनाने'—यह कथन उस व्यक्ति पर लागू होता है जो गरीबी के बावजूद फिजूलखर्ची करता है। 'थूक से सत्तू न सनना' का अर्थ है कि अल्प साधनों से बड़ा कार्य संभव नहीं होता।

हम देख सकते हैं कि मुहावरे और लोकोक्तियाँ भारतीय लोक–संस्कृति की बहुआयामी छवि प्रस्तुत करती हैं और समाज के अनुभव, विश्वास तथा व्यवहार को सहजता से अभिव्यक्त करती हैं।

5.6 पहेलियाँ और पालने के गीत:

5.6.1 पहेलियाँ:

पहेलियाँ मनुष्य द्वारा जानी-पहचानी वस्तुओं को लयात्मक, रहस्यमय और प्रश्नात्मक रूप में व्यक्त करने की एक मनोरंजक शैली हैं, जिनका उत्तर सामने वाले से पूछा जाता है। इस प्रकार के प्रश्नों को ही पहेली कहा जाता है। पहेलियों के हल ने मानव में ज्ञान-विज्ञान के विकास और उसके प्रसार को बढ़ावा दिया है। अपनी बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता के प्रमाण के रूप में मनुष्य अपने समकक्षों से अनेक जिज्ञासापूर्ण प्रश्न करता रहा है, जिन्हें पहेली का रूप दिया गया है।

5.6.2 पहेलियों का उद्भव, विकास और परंपरा:

फ्रेज़र का मत है कि पहेलियों का आरंभ उस समय हुआ होगा जब वक्ता किसी विशेष कारण से अपनी बात स्पष्ट शब्दों में कहने में असमर्थ रहा होगा। मानव-बुद्धि के विकास के साथ मनोरंजन की भावना भी उत्पन्न हुई होगी। इसलिए उसने अपने ज्ञान को गूढ और संकेतपूर्ण रूप में कहकर दूसरों की बुद्धि की परीक्षा ली होगी और साथ ही मनोरंजन भी किया होगा। आज भी लगभग सभी सभ्य समाजों में अवकाश के क्षणों में बुद्धि-परीक्षा और मनोरंजन हेतु पहेलियाँ पूछने की प्रवृत्ति मिलती है। कुछ समुदायों में विशेष अवसरों पर ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं, जो मूलतः पहेलियाँ ही होती हैं।

मध्य प्रदेश के मण्डला क्षेत्र में गोंड़, प्रधान और बिरहोर जातियों के बीच विवाह के अवसर पर पहेलियाँ पूछने की परंपरा प्रचलित है। भोजपुरी अंचल में विवाह के बाद जब वर कोहबर में प्रवेश करता है, तब घर की स्त्रियाँ उससे 'छेका' नामक पहेलियाँ पूछती हैं। वर जब इन पहेलियों का उत्तर दे देता है, तब उसे कोहबर में प्रवेश की अनुमति मिलती है। ऐसी व्यवस्था मनोरंजन के साथ-साथ वर की बुद्धि-परीक्षा हेतु मानी जाती है।

5.6.3 पहेलियों का प्राचीन स्वरूप:

पहेलियों की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। वेदों में भी इनका उल्लेख मिलता है। इसी कारण रामनरेश त्रिपाठी ने ऋग्वेद को 'पहेलियों का वेद' कहा है। डॉ. सत्येंद्र का मत है कि पहेलियाँ अश्वमेध यज्ञ का एक अनुष्ठान थीं। अश्व की बलि के बाद होतु और

ब्राह्मण 'ब्रह्मोदय' अर्थात् पहेलिका पूछा करते थे। ऋग्वेद् का एक मंत्र विद्वानों द्वारा पहेली के रूप में स्वीकार किया गया है—

चत्वारि श्रृंगा त्रयो अस्य पदा,
द्वे शीर्षे सप्तहस्ता सो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोवति,
महादेवो भरत्यायाविवे।।

(भावार्थ: जिसके चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर हैं, सात भुजाएँ हैं और जो तीन स्थानों से बँधा है—वह मनुष्यों में प्रविष्ट होकर वृषभ-नाद करता हुआ महादेव है।

आचार्यों ने इस मंत्र के कई अर्थ बताए हैं, परंतु इसे पहेली अवश्य माना गया है। महाभारत में यक्ष और युधिष्ठिर का संवाद भी पहेलियों के रूप में स्वीकार किया जाता है। संस्कृत साहित्य में तो पहेलियों का अपार भंडार है, जिन्हें अंतर्लापिका और बहिर्लापिका नाम दिया गया है। इनका एक प्रसिद्ध संग्रह 'सुभाषित-रत्न-भाण्डागारम्' नाम से प्राप्त होता है। हिंदी साहित्य में अमीर खुसरो की मुकरियाँ विशेष ख्याति रखती हैं। संस्कृत में भी ऐसी रचनाएँ मिलती हैं। उदाहरण के लिए—

काले वारि-धारणं, अपतित्य नैव शक्यते गन्तुम्।
उत्कण्ठितासि मानद्र?
नहि नहि सखी! पिच्छिलः पन्था।।

(भावार्थ: एक युवती कहती है—"बरसात में बिना फिसले चलना कठिन है।" सखी पूछती है—"क्या तुम पति-संग के लिए व्याकुल हो?" युवती उत्तर देती है—"नहीं, सखी! मेरा आशय यह है कि वर्षा के कारण मार्ग पिच्छिल हो गया है।" इस प्रकार की मुकरियाँ भी मूलतः पहेलियाँ ही हैं।

5.6.4 पहेली और अर्थ-गौरव:

कुछ आधुनिक विद्वानों ने पहेली को एक अलंकार माना है, जैसे लोकोक्ति को अलंकार माना जाता है। किंतु संस्कृत और हिंदी के प्राचीन आचार्य पहेली को अलंकार नहीं मानते। पहेली में बुद्धि-परिश्रम की आवश्यकता होती है, जिसके कारण रसास्वादन में बाधा आती है। यह सूरदास के दृष्टिकूट पदों की तरह है, जिनका अर्थ समझने में बुद्धि का विशेष प्रयोग करना पड़ता है, जिससे रस-भंग होता है। आचार्य सम्मट ने लिखा है—"रसस्य परिपन्थित्वात् नालंकारः प्रहेलिका।" अर्थात् रसानुभूति में व्यवधान उत्पन्न करने के कारण प्रहेलिका (पहेली) अलंकार नहीं मानी जा सकती।

डॉ. सत्येंद्र के अनुसार पहेली किसी वस्तु का वर्णन है, जिसमें अप्राकृतिक उपमानों के माध्यम से वास्तविक वस्तु का संकेत दिया जाता है। लोक-आधारित पहेलियों में ऐसे उपमान प्रायः ग्रामीण जीवन से उठाए जाते हैं। पहेलियों में कुछ सार्थक, कुछ निरर्थक तथा कुछ विचित्र शब्द भी प्रयुक्त होते हैं। ये निरर्थक शब्द भी

वस्तु के भाव की ओर संकेत करने में सहायक होते हैं। इस प्रकार पहेली एक शब्द-चित्र के समान है, जिसमें अस्पष्ट उपमानों से एक संकेतमय रूप सामने आता है। यह संकेत भले ही अधूरा हो, पर इतना सटीक अवश्य होता है कि उससे किसी अन्य वस्तु का बोध सामान्यतः नहीं होता।

5.6.5 पालना गीत/ लोरी गीत:

मानव सभ्यता जितनी पुरानी है, उतनी ही प्राचीन परम्परा पालना गीत या पालने के गीतों की भी मानी जाती है। जब बच्चा शैशव अवस्था में होता है, तो माँ उसे गोद या पालने में झुलाते हुए कोमल लय में गीत सुनाती है। इन्हीं मधुर गीतों को'पालना गीत', 'पालने के गीत' या 'लोरियाँ' कहा जाता है। ये गीत अर्थप्रधान कम और लयप्रधान अधिक होते हैं। इनकी भाषा सरल, कोमल और कानों को सुख देने वाली होती है, जिससे बच्चे के मन में शांति और सुरक्षा का भाव उत्पन्न होता है। ग्रेस रीज ने भी अपनी पुस्तक में यह लिखा है कि लोरियाँ सामान्यतः दो पंक्तियों से आरम्भ होती हैं और एक-सी लय में धीरे-धीरे गाई जाती हैं। उनका असली आकर्षण माँ की आवाज़ के उस मंत्रवत् उतार-चढ़ाव में निहित रहता है, जो शिशु को नींद की ओर खींच ले जाता है।

माएँ प्रायः निन्नी, नेन्ने जैसे अर्थहीन किंतु कोमल और मधुर शब्दों का प्रयोग करती हैं। इन शब्दों में कोई दार्शनिक अर्थ न होते हुए भी उनका लयबद्ध उच्चारण बच्चे को सुकून देता है। अधिकांश लोरियों में दो-तीन शब्दों से अधिक नहीं होता और उनका स्वर पालने की झूलती आवाज से मेल खाता है।इनसे बच्चे की मानसिक शांति और भावनात्मक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ग्रेस रीज के अनुसार सबसे सुंदर लोरियाँ वे हैं, जिन्हें ग्रामीण स्त्रियाँ स्वाभाविक प्रेम से अपने बच्चों को सुलाते समय गाती हैं।

भारतीय संस्कृति में इन गीतों की परम्परा अत्यंत प्राचीन है। महाभारत में वर्णित मदालसा का प्रसंग इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। मदालसा अपने पुत्र अलर्क को सुलाते समय ऐसी लोरियाँ गाती है, जिनमें अद्वैत वेदान्त के गूढ़ तत्व सहजता से प्रकट होते हैं। वह अपने बालक से कहती है—

"हे पुत्र! तुम शुद्ध हो, बुद्ध स्वरूप हो और निरंजन हो। संसार की माया तुम पर प्रभाव नहीं डाल सकती। मोह की निद्रा का परित्याग करो।"

इस प्रकार की लोरी केवल बच्चे को सुलाना ही नहीं, बल्कि उसके माध्यम से उच्च आध्यात्मिक सत्य को भी अभिव्यक्त करती है। रोते हुए शिशु को सांत्वना देते हुए मदालसा कहती है कि तुम्हारा कोई स्थायी नाम नहीं, यह सब माया का निर्माण है। न यह शरीर तुम्हारा है, न तुम शरीर हो; फिर तुम क्यों व्यर्थ रोते हो? तुम्हारा स्वभाव

आनंद है। इसके अतिरिक्त वह यह भी कहती है कि "ब्रह्म ही सत्य है—निरलिप्त, पवित्र और सर्वव्यापी है। तुम उसी ब्रह्म के अंश हो और ज्ञानस्वरूप हो।"

इन प्रसंगों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत की प्रारम्भिक लोरियाँ केवल भावनात्मक ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक ऊँचाई से भी परिपूर्ण थीं। उनमें माता का वात्सल्य, कोमल प्रेम और बच्चे के उज्ज्वल भविष्य की मंगलकामना सहज रूप में अभिव्यक्त होती थी। भारतीय लोकपरम्परा में भी यही प्रेम-भाव स्पष्ट दिखाई देता है। भोजपुरी की एक लोकप्रिय लोरी में माँ अपने पुत्र को स्नेह से पूछती है—

"हे बबुआ, तुम किस चीज़ के बने हो? कभी सोने से चमकते हो, कभी चाँदी से दमकते हो।" यह सरल पंक्तियाँ भी मातृस्नेह की सहज अभिव्यक्ति हैं।

अतः स्पष्ट है कि पालने के गीत केवल शिशु को सुलाने का माध्यम नहीं, बल्कि मानव हृदय की कोमलतम भावनाओं और सांस्कृतिक आदर्शों का प्राचीन प्रतीक हैं। इन गीतों में लय, प्रेम और आध्यात्मिक अनुभूति—तीनों का सुंदर संगम मिलता है, जो पीढ़ियों से माँ और बच्चे के मधुर संबंध को पोषित करता आया है।

5.7 सारांश :

ग्रामीण समाज के लोग अपने दैनिक जीवन में अनेक लोकोक्तियों, मुहावरों, सूक्तियों तथा अन्य जन-भाषिक अभिव्यक्तियों का प्रयोग करते हैं। इनके माध्यम से उनकी वाणी की चतुरता और अनुभवजन्य समझ झलक उठती है। लोकोक्तियों का प्रयोग किसी बात को प्रभावशाली बना देता है, जिससे श्रोता पर उसका विशेष असर पड़ता है। वहीं मुहावरे भाषा को सजीव और सुघड़ बनाकर उसमें गति और सौन्दर्य भर देते हैं। मनोरंजन और बुद्धि-परीक्षण के लिए पहेलियाँ बुनी जाती हैं। गाँवों में बालक एकत्र होकर एक-दूसरे से पहेलियाँ पूछते हैं और इस तरह अपनी समझदारी की परख करते हैं। संस्कृत परंपरा में भी विभिन्न प्रकार की पहेलियाँ मिलती हैं, जिनमें ज्ञान-विकास और मानसिक अभ्यास की झलक दिखाई देती है।

जब शिशु नवजात अवस्था में होता है, तो उसकी माता या धाय उसे झूला झुलाते हुए लोरियाँ सुनाती है। इन लोरियों का उद्देश्य मधुर सुरों द्वारा बच्चे को शांत कर नींद की ओर ले जाना होता है। बाल्यावस्था बीतने पर वही बच्चे खेल-कूद के दौरान विविध प्रकार के गीत गुनगुनाते हैं। जनजीवन की इन अभिव्यक्तियों—लोकोक्तियों, पहेलियों, सूक्तियों, मुहावरों, लोरियों और खेल-गीतों—का व्यापक प्रसार समाज में हर ओर दिखाई देता है। इसी कारण इन्हें सामूहिक रूप से 'प्रकीर्ण साहित्य' का रूप दिया गया है।

5.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा):

प्रश्न 1 का उत्तर: हिंदी शब्द-सागर में 'मुहावरा' उस वाक्यांश या प्रयोग को कहा गया है, जिसका अर्थ लक्षणा या व्यंजना द्वारा सिद्ध हो तथा जो अपने अभिधात्मक अर्थ से भिन्न और विशिष्ट अर्थ व्यक्त करता हो। लाला भगवानदीन ने 'रूढ़ लक्षणा' को मुहावरा माना है।

प्रश्न 2 का उत्तर: लोकोक्तियाँ लोकमानस के अनुभव और बुद्धि की अनुपम निधि हैं। संसार की सभी भाषाओं में ये किसी न किसी रूप में मिलती हैं। ये जन-साधारण के व्यवहारिक ज्ञान तथा निरीक्षण का दर्पण होती हैं। ये मानव-स्वभाव की गहराइयों और उसके जीवनानुभवों का सार प्रस्तुत करती हैं। व्यक्ति के दैनिक जीवन में आने वाली जटिलताओं को सुलझाने के लिए ये सरल मार्गदर्शक का कार्य करती हैं।

प्रश्न संख्या 3 का उत्तर: टी. शिप्ले के अनुसार-लोकोक्ति किसी विशेष समूह में प्रचलित कोई ऐसा वाक्य है जो लोकानुभव पर आधारित जीवन की एक सारभूत समीक्षा है।

प्रश्न संख्या 4 का उत्तर: 'प्रकीर्ण' शब्द का कोशगत अर्थ है—बिखरा हुआ, मिला-जुला या मिश्रित।

प्रश्न संख्या 5 का उत्तर: लोकोक्ति को उर्दू में 'ज़बुल-मिस्ल' कहते है।

5.9 अधिक जानने के लिए पढ़े:

- परमार, डॉ. श्याम.(1954). भारतीय लोकसाहित्य. नई दिल्ली:राजकमल प्रकाशन.
- राय, बाबू गुलाब.(1974-75). भारतीय संस्कृति. ग्वालियर:रवीन्द्र प्रकाशन.
- कुमार, जैनेन्द्र.(1979). साहित्य और संस्कृति. नई दिल्ली:पूर्वोदय प्रकाशन.
- पांडे, डॉ.त्रिलोचन.(1978). लोकसाहित्य का अध्ययन. इलाहाबाद:लोकभारती प्रकाशन.
- उपाध्याय,डॉ.कृष्णदेव.(1957).लोक-साहित्य की भूमिका. इलाहाबाद:साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड.
- उपाध्याय,डॉ.कृष्णदेव.(2014).लोक-संस्कृति की रूपरेखा.इलाहाबाद:लोकभारती प्रकाशन.
- गौतम, सुरेश.(2008). लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति. दिल्ली:संजय प्रकाशन.
- नारायण, बद्री.(2014). लोक-संस्कृति और इतिहास. इलाहाबाद: लोक भारती प्रकाशन.

- शुक्ल, जयश्री जैन.(2014). लोकसाहित्य की प्रासंगिकता. दिल्ली:भवना प्रकाशन.
- उनियाल, राजेश्वर(2014). हिंदी लोक साहित्य का प्रबंधन, दिल्ली:कल्पना प्रकाशन.

5.10 अभ्यास-प्रश्न:

(क) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप मेंदीजिए-

1. लोकोक्ति को परिभाषित कीजिए।
2. राजस्थानी में लोकोक्ति को क्या कहते हैं?
3. संस्कृत साहित्य में किन-किन कवियों ने अपनी रचनाओं में लोकोक्तियों का सशक्त प्रयोग किया है?
4. लोकोक्ति को परिभाषित कीजिए।
5. मुहावरे से आप क्या समझते हैं?
6. डॉ. कृष्णलाल हंस ने मुहावरे के संबंध में क्या कहाहै?
7. 'पहेलियाँ' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर विस्तार से लिखिए-

1. प्रकीर्ण साहित्य का अर्थ एवं अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
2. लोकोक्ति का अर्थ स्पष्ट करते हुएइसकी प्राचीन परंपरा पर चर्चा कीजिए।
3. लोकोक्ति की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. मुहावरे की अवधारणा स्पष्ट करते हुए मुहावरा और लोकोक्ति में अंतर स्पष्ट करें।
5. लोकोक्ति और मुहावरे में अभिव्यक्त लोक संस्कृति पर चर्चा कीजिए।
6. पहेली और पालना गीत पर आलेख तैयार कीजिए।



This document was created with the Win2PDF “Print to PDF” printer available at

https://www.win2pdf.com

This version of Win2PDF 10 is for evaluation and non-commercial use only.
Visit https://www.win2pdf.com/trial/ for a 30 day trial license.

This page will not be added after purchasing Win2PDF.

https://www.win2pdf.com/purchase/